साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. 30/-
आजीवन शुल्क रु. 500/-

बुद्धवर्ष 2559, माघ पूर्णिमा, 22 फरवरी, 2016 वर्ष 45 अंक 9

For online **Patrika** in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

अस्सद्धो अकतञ्ञू च, सन्धिच्छेदो च यो नरो।
हतावकासो वन्तासो, स वे उत्तमपोरिसो॥
– धम्मपद ९७, अरहन्तवग्गो.

– जो नर (अंध-) श्रद्धारहित, निर्वाण का जानकार, (भव-संसरण की) संधि का छेदन किये हुए, (पुनर्जन्म की) संभावनारहित और (सर्वप्रकार की) आशाएं त्यागे हुए हो, वह निःसंदेह उत्तम पुरुष होता है।

स्वयं गंगा जब प्यासों की प्यास बुझाने गयी

– प्रो. अंगराज चौधरी

अगस्त २००९ का मासिक प्रेरणा पत्र 'विपश्यना' देखा। पूज्य गुरुजी के विपश्यना सिखाने के प्रारंभिक अनुभव पढ़े और अंत में यह पढ़ा कि वे उन सब का उपकार मानते हैं जिन्होंने प्रारंभिक दस वर्षों (१९६९-१९७९) में उनसे विपश्यना विद्या सीखी। अतः वे कृतज्ञता सम्मेलन कर उन सबों के प्रति १७ जनवरी २०१० को ग्लोबल पगोडा पर कृतज्ञता ज्ञापन करना चाहते हैं। इसे पढ़कर बड़ा अजीब लगा, लेकिन साथ ही गुरुजी के प्रति अपार श्रद्धा जागी। क्या यह गुरुजी की महती उदारता और अल्पेच्छता की पराकाष्ठा नहीं है? विपश्यना विद्या सीखने वालों को पूज्य गुरुजी का उपकार मानना चाहिए पर उलटे वे उन साधकों के प्रति कृतज्ञ हैं जिन्होंने उन्हें विपश्यना सिखाने के लिए दस दिनों का 'अनमोल' समय दिया। यह तो वही बात हुई जैसे गंगा प्यासों की प्यास बुझाने उनके पास जाय, उनकी प्यास बुझाये और यह कहे कि वह प्यासों का उपकार नहीं भूल सकती क्योंकि उन्होंने उसे प्यास बुझाने का अवसर दिया। पूज्य गुरुजी की इस महानता का वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। यह सोचकर मेरा रोम-रोम उनके प्रति कृतज्ञता से भर उठा। मुझे अपने प्रथम शिविर की याद हो आयी जिसका संचालन उन्होंने १९७३ में किया था।

भारत के प्रथम १० वर्षों के कुल १६५ शिविरों में जिन १६,४९६ लोगों ने भाग लिया उनमें मैं भी एक हूं। पूज्य गुरुजी ने नव नालंदा महाविहार, नालंदा, बिहार में एक शिविर २० से ३०.९.१९७३ तक लगाया था। तब मैं वहां प्राध्यापक था। बुद्ध की वाणी पढ़ता-पढ़ाता था पर 'विपश्यना' जो बुद्ध की शिक्षा का सार है, उसके बारे में क, ख, ग, भी नहीं जानता था। श्रीलंका के एक भिक्षु पूज्य धम्मरतनजी तथा म्यंमा के मेरे विद्यार्थी भिक्षु ऊ जागराभिवंसजी एवं अन्य मित्रों के कहने पर, जिन्होंने पूज्य गुरुजी केसाथ विपश्यना साधना की थी या इसके बारे में सुन रखा था, मैंने भी साधना शिविर में भाग लेने का मन बनाया।

वहां पर शिविर वैसा नहीं लगा जैसे आजकल लगते हैं, जहां शिविर के परिसर में ही खाने-पीने तथा रहने की व्यवस्था होती है। रहने की व्यवस्था तो महाविहार में थी पर मेरा खाना समय पर मेरे घर से आ जाया करता था। आर्य मौन होने के कारण बात किसी से कर नहीं सकता था। आंखें मूंदकर बैठे रहना, पहले साढ़े तीन दिनों तक आती-जाती सांस को देखते रहना-- अजीब-सा लगता था। फिर संवेदना देखने की बात कही गयी। सांस देखने से ज्यादा सूक्ष्म काम था संवेदना देखने का। समझ में नहीं आता था कि गुरुजी ये सब क्यों करवा रहे हैं? पहले तो लगा यह सब बेकार है– इससे तो अच्छा होता पूज्य गुरुजी बुद्ध के दर्शन पर भाषण देते। प्राध्यापक था न, भाषण देना और सुनना अच्छा लगता था लेकिन व्युत्पन्न भी था, जिज्ञासु भी था। धीरे-धीरे यह बात समझ में आने लगी कि आज तक कभी अपने अंदर झांक कर देखा नहीं था, सांस के आने-जाने पर भी कभी ध्यान नहीं दिया था। मन कैसे काम करता है, यह कितना चंचल है, कैसे यह शीघ्रता से एक विषय से दूसरे विषय पर चला जाता है? – इन बातों पर ध्यान देने की बात तो दूर, आजतक यह देखना भी नहीं सीखा था कि सांस को लगातार देखना क्या होता है? सांस का हल्का, भारी, गर्म, ठंढा, होना क्या होता है? और ऐसा होता क्यों है? फिर मन में विचार आता -- क्या करेगा कोई सांस का आना-जाना देखकर? यह तो व्यर्थ का समय गँवाना हुआ। पर गुरुजी जिस एकाग्रता से आसन पर बैठ कर प्रभावशाली ढंग से इन बातों को कहते उनसे लगता था कि इस तरह देखने से कुछ लाभ अवश्य होता होगा नहीं तो यह व्यक्ति इतना समय क्यों बर्बाद करता। और इसी आशा से काम करता रहा एवं सोचता रहा कि जब कुछ और काम नहीं कर रहा हूं, न पढ़ रहा हूं, न पढ़ा रहा हूं और न कुछ लिख रहा हूं, क्योंकि ये काम वर्जित थे, तब क्यों न सांस के आने-जाने पर ही मन को एकाग्र करूं और देखूं कि क्या अनुभव होता है। लेकिन यह बात जल्द ही समझ में आ गयी कि यह करना कितना कठिन है। पर यदि कुछ क्षण के लिए भी मन एकाग्र होता तो जो-जो अनुभव कर पाता, वह नया होता, जिसका पहले कभी अनुभव नहीं किया था। अरे! मन कितना चंचल है। अब कुछ-कुछ समझ में आया कि बुद्ध ने मन के बारे में ऐसा क्यों कहा है – **फन्दनं चपलं चित्तं, दुरक्खं, दुन्निवारयं** -- यानी, चित्त कितना चंचल है, कितना चपल है, कितना मुश्किल है इसे वश में करना और कितना कठिन है इसको यहां-वहां जाने से रोकना।

चित्त के बारे में ये विशेषण कितने सटीक थे यह बात समझ में आने लगी।

आनापान के साढ़े तीन दिनों में जब कभी मन एकाग्र होता, अचंचल और शांत होता तब देख पाता कि अंदर क्या हो रहा है। अब तक तो बाहर ही देखता रहा था, पर अंदर भी कुछ हो रहा है, उसे देखा जा सकता है तथा देखने की यह एक विद्या है -- यह उसी समय जाना। आते-जाते सांस को देखने का अभ्यास करने का मतलब था अपनी जागरूकता और सावधानता को बढ़ाना।

इसे ही पालि में 'सति' कहते हैं। इसके साथ एक और पालि शब्द आता है जिसे 'सम्पजञ्ञ' कहते हैं। इसकी चर्चा बाद में करूंगा।

एम. ए. क्लास में विशुद्धिमार्ग पढ़ाने के क्रम में इन दोनों शब्दों से पाला तो पड़ा था पर गहराई से परिचय नहीं हो पाया था। इन दोनों शब्दों का अर्थ अपनी समझ के अनुसार विद्यार्थियों को बता देता था। उन्हें मैं जो कहता वह उनके लिए वेदवाक्य होता। 'सति' का अर्थ 'स्मृति' कहकर बता देता। 'सम्पजञ्ञ' का अर्थ सं+प उपसर्गों के सहारे 'कुछ विशेष रूप से जानना' बता देता। यह सही है कि मुझे संतोष नहीं होता था क्योंकि मैं इन पारिभाषिक शब्दों के अर्थ की तह तक नहीं पहुँच पाता था। (पर विद्यार्थी तो मुझ पर पूर्णतः आश्रित थे। कुछ इस तरह बताता था कि नहीं समझकर भी वे समझ लेने की बात कह देते थे।)

अब मैं शाम के समय गुरुजी के प्रवचनों को बड़े ध्यान से सुनने लगा। ऐसा लगने लगा था कि साधना करते समय जो धुंधले प्रश्न मन में उठते थे, गुरुजी उन्हीं का उत्तर शाम को देते थे जैसे मन में उठने वाले प्रश्नों को वे जान जाते थे। क्यों न जानते? उनका स्वयं का अनुभव जो था।

आती-जाती सांस पर ध्यान देने की कठिनाई समझ में आने लगी। अरे, कुछ सेकेण्ड भी तो मन को एकाग्र नहीं कर पाता। दस तक गिनते-गिनते मन कहां से कहां भाग जाता, पता ही न चलता। फिर आती-जाती सांस पर लाता, फिर भटक जाता, बहक जाता। अब 'सति' का अर्थ समझ में आने लगा-- वर्तमान में एकाग्र मन की निरंतरता अर्थात बिना निरंतरता भंग किये उसका एकाग्र बना रहना। लेकिन यह कितना कठिन काम है। बिना वर्तमान में रहे यह संभव नहीं था जबकि मन की आदत तो अतीत या भविष्य में विचरण करने की है। इस पर नियंत्रण करना, एक जगह, एक बिंदु पर रोक कर रखना, कितना कठिन काम है यह।

पर गुरुजी कहते – यही तो करना है, यही तो साधना है। आंख मूंदकर सांस का आना-जाना देखना मामूली काम नहीं है। बड़ा पौरुष का काम है। यह एक बड़ा पुरुषार्थ है और निरर्थक बिल्कुल ही नहीं। इसी को तो 'सम्यक व्यायाम' कहा गया है। इसी संदर्भ में पूज्य गुरुजी शील-पालन का महत्त्व समझाते जो मन को एकाग्र करने के लिए अत्यंत आवश्यक है। चूंकि शील-पालन से ही मन के विकार दूर होते हैं, विकारों के दूर हुए बिना चित्त की एकाग्रता प्राप्त नहीं की जा सकती।

पूज्य गुरुजी कहते – यह कठिन अवश्य है, पर असंभव नहीं। निरंतर अभ्यास से यह उसी तरह आसान हो जाता है जैसे प्रतिदिन ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर जब गाड़ी चलती रहती है तब एक समय आता है जब एक लीक बन जाती है और गाड़ी उस पर आसानी से चलने लगती है। तब उस गाड़ी पर बैठा व्यक्ति हिचकोले नहीं खाता, उसकी यात्रा सुगम हो जाती है। इससे मेरे पहले शिविर में लीक बनाने में अभ्यास की निरंतरता की आवश्यकता तो समझ में आयी, पर लीक बन नहीं सकी। इतनी बात अवश्य समझ में आ गयी कि यदि अपने मन के अंदर उठने वाले भावों को, उसके अंदर होने वाली क्रियाओं को साफ-साफ देखना है तो चंचल मन को अचंचल और एकाग्र करना ही होगा। जैसे टार्च के फोकस को ठीक किये बिना वस्तुएं साफ-साफ नहीं देखी जातीं, वैसे ही चित्त की एकाग्रता के बिना मन के अंदर होने वाले क्रिया-कलापों को कोई साफ-साफ कैसे देख सकता है? और इसके लिए विपश्यना साधना करनी ही होगी – साधना पथ पर चलकर आनापान तथा विपश्यना का अभ्यास करना ही होगा और अभ्यास की निरंतरता बनाये रखनी ही होगी।

विपश्यना के क्षेत्र में जाने के बाद एक दूसरा पारिभाषिक शब्द जो समझ में आया वह था 'सम्पजञ्ञ'। जैसा मैंने ऊपर कहा इतना तो उपसर्गों के सहारे अर्थ बता दिया करता था कि यह 'जानना' से कुछ अधिक है। लेकिन कितना अधिक, और इस जानने का स्वभाव क्या है और कितनी दूर तक, कितनी गहराई में जाकर इसका अर्थ जानना है, यह तब समझ में आया जब संवेदना की अनित्यता को देखना सीखा।

शरीर पर सुखद, दुःखद संवेदनाएं होती हैं – यह तो तुरंत समझ में आ गया और यह बात भी कुछ-कुछ समझ में आने लगी कि संवेदनाएं अनित्य हैं, शाश्वत नहीं हैं। यह तो प्रत्यक्ष अनुभव होता है कि पीड़ा सदा के लिए नहीं रहती और चाह कर भी सुखद संवेदनाओं को सदा के लिए नहीं रख पाता। इस प्रकार प्रकृति के नियमों को थोड़ा-थोड़ा समझने लगा। अगर गुरुजी का प्रवचन सुनकर ही रह जाता, देखने का अभ्यास नहीं करता तो बात समझ में न आती, पर गुरुजी सिर्फ बताते ही नहीं थे, बल्कि अभ्यास कराकर अपनी अनुभूति से जानना सिखाते थे। इसी संदर्भ में पांच मिनट के बाद "फिर शुरू कर दें" का महत्त्व समझ में आने लगा। ऐसा कहने का दो ही अर्थ है-- एक तो समय बर्बाद न करें और दूसरा साधना की निरंतरता बनाये रखें। ऐसा कराने से बहुत अंतर आया।

अंतिम प्रवचन में पूज्य गुरुजी ने अभ्यास की निरंतरता बनाये रखने के लिए प्रतिदिन सुबह, शाम एक-एक घंटे साधना करने की बात कही थी और यह भी कहा था कि मन की एकाग्रता बढ़ाने से स्मरणशक्ति भी बढ़ती है और काम करने की क्षमता भी।

दस दिनों के अभ्यास से एक नयी दुनिया सामने आयी – वह दुनिया जिसके बारे में पढ़कर कभी जान ही नहीं सकता था।

पहली बार विपश्यना करने से और क्या लाभ हुआ इसका वर्णन मैं यहां नहीं करूंगा। एक बहुत बड़ा लाभ जो हुआ वह था पालि साहित्य में आये पारिभाषिक शब्दों का अर्थ स्वानुभूति से जानना और शब्दों के, विशेषकर महत्त्वपूर्ण पारिभाषिक शब्दों के अर्थों को विपश्यना करके ही जान सका। यह मेरे लिए बड़े काम का रहा। मैं प्राध्यापक था। विद्यार्थियों को शब्दों का अर्थ बताने के पहले मुझे तो उनका अर्थ जानना आवश्यक था।

एक नया क्षितिज मेरे सामने था। अनुभवों की एक नई दुनिया मेरे सामने थी।

शब्द और अर्थ में क्या संबंध है – इस पर अपनी डी. लिट थीसिस के दौरान बहुत अध्ययन किया था। मीमांसकों के सिद्धांत पढ़े थे। **वाक्यपदीय** में भर्तृहरि का विचार पढ़ा था। यह भी पढ़ा था कि शब्द और अर्थ एक दूसरे में अनुविद्ध हैं और सभी प्रकार के ज्ञान शब्दों के माध्यम से जाने जा सकते हैं –

न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके, यः शब्दानुगमादृते।
अनुविद्धमिव ज्ञानम्, सर्वं शब्देन भासते।।

इसी को आधार मानकर प्राध्यापक बनने के प्रारंभिक दिनों में मैंने 'भाषा और संस्कृति' नामक एक लेख लिखा था जिसमें मैंने प्रतिपादित किया था कि किसी भी संस्कृति को जानने के लिए उसको व्यक्त करने वाली भाषा को जानना आवश्यक है चूंकि भाषा और संस्कृति में अन्योन्याश्रय संबंध है और भाषा संस्कृति की संवाहिका है। मुझे याद है इस पर आपत्ति उठाते हुए दक्षिण के अंग्रेजी के एक प्राध्यापक ने कहा था – यह सही नहीं है। बहुत से ऐसे अनुभव हैं जो शब्दगम्य नहीं हैं अर्थात शब्द उन्हें व्यक्त नहीं कर सकते। यदि वे व्यक्त कर सकते तो उपनिषदकार 'नेति नेति' क्यों कहते?

इस दृष्टिकोण से जब 'सति' 'सम्पजञ्ञ' आदि पारिभाषिक शब्दों के अर्थ को जानने की कोशिश की तो यह बात समझ में आयी कि ये शब्द सिर्फ इंगित करने वाले हैं, बताने वाले हैं, उस

उठी उंगली की तरह जो चांद को बताता है। पर उठी उंगली क्या चांद है? 'सति' 'सम्पजञ्ञ' आदि शब्द भी चांद की ओर उठी उंगली की तरह हैं, चांद नहीं हैं। चांद को अच्छी तरह जानने के लिए और भी बहुत कुछ करना होगा। चांद पर चढ़ना होगा, वहां रहना होगा तभी कोई उसके बारे में पूरा जान सकता है। विपश्यना साधना द्वारा 'सति' और 'सम्पजञ्ञ' का अर्थ साफ समझ में आ सकता है और वह भी अनुभूति के धरातल पर। 'हाथी' 'घोड़ा' आदि शब्द जिनके लिए प्रयुक्त होते हैं उन्हें श्रुतमयी प्रज्ञा से जाना जा सकता है। कोई हाथी दिखाता है और कहता है यह हाथी है। इस तरह 'हाथी' शब्द का अर्थ समझ में आ जाता है। उसी तरह 'घोड़े' का, 'बालक' का, अर्थ समझ में आ जाता है। पर 'सति' और 'सम्पजञ्ञ' का अर्थ तो बिना भावनामयी प्रज्ञा के जाना ही नहीं जा सकता। इस तरह और भी पालि साहित्य के अनेक पारिभाषिक शब्दों के अर्थ कुछ-कुछ समझ में आने लगे।

मेत्ता (मैत्री) के दिन पूज्य गुरुजी से मिला था और मैंने यह कहकर कृतज्ञता व्यक्त की थी कि 'गुरुजी, आपने मेरी आंखें खोल दी। अभी तक 'सति' और 'सम्पजञ्ञ' आदि शब्दों का अर्थ बिल्कुल ही नहीं समझता था। अब समझ में आने लगा है। गुरुजी ने मुस्करा कर कहा था– 'यही होता है, जब तक पटिपत्ति (अभ्यास) नहीं करोगे, परियत्ति (सिद्धांत) समझ में नहीं आयगी।'

परियत्ति और पटिपत्ति में गहरा संबंध है। विशेषकर पालि साहित्य में जिसमें ऐसे व्यक्ति के वचन हैं जिन्होंने अनुभूति के आधार पर, मात्र श्रुतमयी और चिंतनमयी प्रज्ञा के आधार पर नहीं, बल्कि भावनामयी प्रज्ञा के आधार पर बातें कही हैं और उपदेश दिये हैं। यह मेरे लिये आर्किमेडिज का 'यूरेका' (Eureka) था। एक ऐसा अनुभव जो कभी भुलाया नहीं जा सकता।

पूज्य गुरुजी ने जो दृष्टि दी, उससे तृष्णा कहां उत्पन्न होती है, क्यों उत्पन्न होती है और इसे कैसे रोका जा सकता है– ये बातें समझ में आईं।

यं लोके पियरूपं सातरूपं एत्थेसा तण्हा उप्पज्जमाना उप्पज्जति, एत्थ निविसमाना निविसति।

यं लोके पियरूपं सातरूपं एत्थेसा तण्हा पहीयमाना पहीयति, एत्थ निरुज्झमाना निरुज्झति।

हमारी तृष्णा के कारण वे प्रिय एवं सुंदर रूप हैं जिनके प्रति हम आकर्षित होते हैं। यदि हम आकर्षित न हों, उनके प्रति राग न करें, तो तृष्णा उत्पन्न ही नहीं होगी।

ध्यान करके ही इसे अच्छी तरह समझा जा सकता है कि **'फुस्स फुस्स व्यन्तीकरोति'** का क्या अर्थ है और कैसे हम पुराने संस्कारों को अशेष रूप से मिटा सकते हैं। अगर हम समथ की भावना करें तो नये संस्कारों को नहीं बनायेंगे, **नवं नत्थि संभवं** पर पुराने को कैसे शेष करेंगे – **खीणं पुराणं** – यह विपश्यना करते हुए, प्रतिक्रिया न करना सीख कर ही, कर सकते हैं।

बुद्ध ने जितने नियम प्रतिपादित किये उनकी सत्यता विपश्यना करके ही जानी जा सकती है। इन नियमों की सत्यता की परीक्षा किसी बाहरी प्रयोगशाला में नहीं की जा सकती। साढ़े तीन हाथ की काया के भीतर ही की जा सकती है। **वेदनापच्चया तण्हा** – वेदना के प्रत्यय से तृष्णा उत्पन्न होती है– यह अपने अंदर झांक कर ही समझा जा सकता है। वेदना देखकर कैसे प्रज्ञा विकसित की जा सकती है– यह भी जाना।

क्रोध मनुष्य को जलाता है– यह अनुभव के धरातल पर देखना नहीं सीखता तो – **पुब्बे हनति अत्तानं, पच्छा हनति सो परे –** पहले अपने को कष्ट देता है, बाद में दूसरे को – यह बात कैसे जानता? और क्रोध से छुटकारा कैसे पाता?

पूज्य गुरुजी ने देखना सिखाया, आंखें खोल दीं। मुझे तो उन्होंने बुद्ध की वाणी को समझना सिखाया। मैं प्यासा होने पर भी नहीं जानता था कि प्यासा हूं। स्वयं गंगा ने मेरे पास आकर मेरी प्यास बुझायी। पूज्य गुरुजी के इस उपकार के लिए मेरा रोम-रोम कृतज्ञ है।

विपश्यना विशोधन विन्यास, गोराई, मुंबई में अभिधर्म पर कार्यशाला

ग्लोबल विपश्यना पगोडा पर अभिधर्म के विद्वान द्वारा अभिधर्म पर एक निवासीय कार्यशाला आगामी ३ से ७ अप्रेल, २०१६ तक अंग्रेजी माध्यम से आयोजित की गयी है। इसके लिए आवेदन करने की अंतिम तिथि २० फरवरी है। अपनी योग्यता और आवेदन-पत्र आदि के बारे में अधिक जानकारी के लिए कृपया निम्न वेबसाइट देखें--
http://www.vridhamma.org/Theory-And-Practice-Courses

अतिरिक्त उत्तरदायित्त्व

१, श्री अनिल मेहता, धम्मगुना (धम्म आवास) गुना-ग्वालियर संभाग के लिए केंद्र-आचार्य के रूप में सेवा

२. श्री प्रवीण भल्ला, धम्मधज, पंजाब के लिए केंद्र-आचार्य के रूप में सेवा

3. Mr. Shirendev Dorlig, To serve as a centre teacher for Dhamma Mahana, Mongolia.

4-5. Mr. Amy and Mrs. Rashmi Shanker, To serve as centre teachers for Dhamma Delaware, USA.

६. श्री रमेश पंडित, धम्मपाल, भोपाल के लिए केंद्र-आचार्य की सहायता सेवा

७-८. श्री गौतम एंव श्रीमती वनमाला चिकटे, धम्मअजय, चंद्रपुर के केंद्र-आचार्य की सहायता सेवा

९. श्री राकेश सिंह बिसेन, धम्मलक्खन, लखनऊ के केंद्र आचार्य की सहायता सेवा

१०. श्री आर. कन्नन, धम्ममधुरा, मदुराई के केंद्र-आचार्य की सहायता सेवा

11. Mr. Itamar Sofer, To assist the Center Teachers in serving Dhamma Korea.

12. Mrs. Jung Im Jung, To assist the Center Teachers in serving Dhamma Korea

नये उत्तरदायित्त्व

वरिष्ठ सहायक आचार्य

१. श्री अम्बालाल राजभट्ट, भोपाल

२-३. श्री गौतम चिकटे एवं. श्रीमती वनमाला चिकटे, चंद्रपुर

४. श्रीमती प्रमिला खान्ते, नागपुर

५. श्री चंद्रशेखर दात्ये, पुणे

6. Kirsten Schulte, Germany

7. Nanette Kurz, Germany

8-9. Michael & Hilde Hübner, Germany

10. U Khin Maung Soe, Myanmar

11. U Thant Sin, Myanmar

12. U Sai Hsai Leng, Myanmar

13. Daw Nang Khin Htay, Myanmar

नवनियुक्तियां

भिक्षु आचार्य

१. भिक्षु सरणंकर, नागपुर

सहायक आचार्य

१. श्री आनंद हिवरकर, जलगांव

२. श्री जनार्दन जांगलू भगत, वाशिम (महाराष्ट्र)

३. श्री विजय टेम्पे, नागपुर

४. श्री कनुभाई पघदार, राजकोट

५. श्री भार्गव करिया, अहमादाबाद

६. श्रीमती चेतनाबेन मावडिया, राजकोट

७. श्रीमती प्रभावती सूर्यवंशी, नाशिक

८. श्री सुपरीमल बरुआ, कोलकाता

९. श्री निरंजन सिन्हा, रांची

१० श्री आर. श्रीनिवासन, मदुराई

११. श्री बालराजा तरिगोप्पुला, हैदराबाद

१२. श्री आर.आर. रामाकृष्णन, चेन्नई

१३. श्री संजय उके, इगतपुरी

१४. श्री संकेत गायकवाड, ठाणे

१५. श्री अंकुर नातू, इगतपुरी

१६. श्री बालकृष्ण राजे, पुणे

१७. श्रीमती चंद्रकला चौऋषि, पुणे

18. Mr. Chandran P A, Dubai, UAE

19. Dr. Kingsley Wickremasuriya, Sri Lanka

बालशिविर शिक्षक

१. श्री मिलिंद उमाले, भुसावल

२. श्री संजय यादव, भुसावल

३. श्री योगेश सोनार, भुसावल

४. श्री इंद्रजीत तायडे, जलगांव

५. श्री प्रवीणकुमार गोटेकर, राजनांदगांव, छत्तीसगढ़

६. श्री पीताम्बर अग्रवाल, रायपुर, छत्तीसगढ़

७-८. श्री गोपकुमार आर. एवं श्रीमती नन्दा, त्रिवेंद्रम

९. श्रीमती रमादेवी, चेंगान्नूर

१०. श्री जॉन जैकब, चेरियानंद

11. Mrs. Aruma Hennedige, Chandani, Sri Lanka

12. Mr. Bo Wen Hsiao, Taiwan

13. Mr. Chi Hsing Hsiao, Taiwan

14. Mr. Kwan Wo Fu, Raymond, China

15. Mr. Liu Lai, China

16. Mr. Yan He Guo, China

17. Ms. Ilse Caestecker, Belgium

Registered No. NSK/235/2015-2017

WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2015-2017

धम्मगुना, गुना-ग्वालियर संभाग, (म.प्र.)

'**धम्मगुना**' (धम्म आवास), **'विपश्यना लोक न्यास',** ग्राम पगारा, १२ किमी. गुना-ग्वालियर संभाग पर। 'गुना' को मालवा पठार का द्वार कहा जाता है। **'पगारा'** एवं **'गुना'** रेल्वे स्टेशन जोधपुर, जयपुर, कोटा, रतलाम, ग्वालियर, इंदौर, बांद्रा (मुंबई), बीना, भोपाल आदि से सीधे जुड़े हैं। 'धम्मगुना' गुना से ग्वालियर की ओर पगारा गांव के हरे-भरे खेतों के बीच तीन एकड़ समतल भूमि पर स्थित है। फिलहाल यहां पर १५ पुरुषों एवं १५ महिलाओं के लिए एक एवं दो बिस्तरों वाले शौचालय युक्त निवास, धम्मकक्ष, आचार्यों तथा धम्मसेवकों के शौचालय युक्त निवासों के साथ, कार्यालय एवं अन्य आवश्यक कमरों, रसोईघर की एवं स्वतंत्र रूप से बिजली-पानी आदि की व्यवस्था हो चुकी है। मार्च २०१३ से यहां नियमित रूप से शिविर लग रहे हैं। पूर्ण केंद्र बनाने हेतु कम-से-कम ४-५ एकड़ जमीन चाहिए, जिसकी पूर्ति होने पर आवश्यक भवनों का निर्माण हो सकेगा और अधिकाधिक लोग धर्मलाभी हो सकेंगे। 'Dhammguna' की वेबसाइट-- http://www.guna.dhamma.org/os पर ऑनलाइन रजिस्ट्रेशन की सुविधा के साथ, स्थान का ऐतिहासिक महत्त्व, विपश्यना संबंधी विस्तृत जानकारी, भावी शिविरों की तिथियां आदि दी गयी हैं। जो भी साधक-साधिकाएं इस पुण्य-क्षेत्र में भागीदार बनना चाहें, वे कृपया **संपर्क करें** -- श्री वीरेंद्र सिंह रघुवंशी, रघुवंशी किराना स्टोर, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के पास, अशोक नगर रोड, गांव- पगारा, तहसील-जिला- गुना, म.प्र. पिन- ४७३००१. मो. ९४२५६१८०९५, श्री राजकुमार रघुवंशी, ९४२५१३११०३, Email: info@guna.dhamma.org

'विपश्यना लोक न्यास', स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, खाता क्र. 31630432478, IFSC- SBIN 0030196, पगारा, गुना. (*सीधे बैंक-व्यवहार करने पर कृपया पत्र या ईमेल से सूचित अवश्य करें।*) -------

मंगल मृत्यु

मुंबई में पूज्य गुरुजी के छोटे भाई श्री गौरीशंकर गोयन्का का शरीर २६ जनवरी, २०१६ को शांत हुआ। वे बरमा रहते हुए सयाजी ऊ बा खिन से विपश्यना विद्या सीख कर सपरिवार भारत आ बसे थे और यहां की विकट परिस्थितियों में भी इसे जारी रखे हुए थे। अपने दोनों छोटे भाइयों (गौरीशंकर-सीता, राधेश्याम-विमला) को साधना करते रहने का प्रोत्साहन देते हुए पूज्य गुरुदेव ने बरमा से अनेक धर्मपत्र लिखे थे जिनमें से कुछ विपश्यना पत्रिका में छपे हैं।

१९६९ में पूज्य गुरुजी के भारत आने के बाद इन सभी ने धर्म प्रसार के कार्य में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था। श्री गौरीशंकर 'सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट' एवं 'विपश्यना विशोधन विन्यास' के कई वर्षों तक ट्रस्टी भी रहे। निश्चित ही उनका धर्मबल उनके भावी जीवनों को सुखमय बनायगा। धम्म परिवार की प्रभूत मंगल कामनाएं। -------

वर्ष २०१६ के सभी एक-दिवसीय महाशिविर

रविवार, २२ मई - बुद्ध पूर्णिमा, **रविवार, १७ जुलाई** - गुरु पूर्णिमा, **रविवार, २ अक्टूबर** - पू. गुरुजी श्री गोयन्काजी के प्रति कृतज्ञता (*२९ सितंबर*) एवं शरद पूर्णिमा -- के उपलक्ष्य में **'ग्लोबल विपश्यना पगोडा'** में एक दिवसीय महाशिविर होंगे। **शिविर-समयः** प्रातः **11** बजे से अपराह्न **4** बजे तक। 3 बजे के प्रवचन में बिना साधना किये लोग भी बैठ सकते हैं। बुकिंग के लिए कृपया निम्न फोन नंबरों या ईमेल से शीघ्र संपर्क करें। कृपया बिना बुकिंग कराये न आयें और **समग्गानं तपोसुखो**- सामूहिक तप-सुख का लाभ उठाएं। **संपर्कः** 022-28451170 022-337475-01/43/44- Extn. 9, (**फोन बुकिंग : 11** से **5** बजे तक, प्रतिदिन)
Online Regn.: www.oneday.globalpagoda.org

दोहे धर्म के

जनम मिला जिस देश में, धर्म मिला जिस देश।
जागे हृदय कृतज्ञता, श्रद्धा जगे अशेष॥

धन्य पड़ोसी देश के, संत और अरहंत।
रक्षित रख सद्धर्म को, मंगल किया अनंत॥

जहां बोधि का मुक्ति पथ, जागे बारंबार।
पावन भारत भूमि का, ना भूलें उपकार॥

यह संतों की भूमि है, सद्गुरुओं का देश।
इसके कण-कण में भरा, करुणा का संदेश॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोन: 2493 8893, फैक्स: 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

गुरुवर री करुणा जगी, हुयो किसो कल्याण।
प्यासै नै इमरत मिल्यो, मिल्यो धरम वरदान॥

सत सत पिंडां मँह जगी, सुद्ध धरम री जोत।
इक इक जोत जगावसी, लाखां लाखां जोत॥

अवसर आयो धरम रो, मत तू ब्यर्थ गँवाय।
धरम गंग रै तीर स्यूं, मत तू प्यासो जाय॥

गुरुवर री महती क्रिपा, पायो विद्या दान।
मिटी काळिमा मोह री, जाग्यो अंतरग्यान॥

मोरया ट्रेडिंग कंपनी
सर्वो स्टॉकिस्ट - इंडियन ऑईल, ७४, सुरेशदादा जैन शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, एन.एच.६, अजिंठा चौक, जलगांव - ४२५ ००३, फोन. नं. ०२५७-२२१०३७२, २२१२८७७
मोबा.०९४२३१८७३०१, Email: **morolium_jal@yahoo.co.in**
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी- 422 403, दूरभाष : (02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अपोलो प्रिंटिंग प्रेस, जी-२५९, सीकॉफ लिमिटेड, ६९ एम. आय. डी. सी, सातपुर, नाशिक-422 007. **बुद्धवर्ष 2559, माघ पूर्णिमा, 22 फरवरी, 2016**

वार्षिक शुल्क रु. **30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. **500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/235/2015-2017**

WPP Postal Licence No. AR/Techno/WPP-05/2015-2017
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.)

DATE OF PRINTING: 12 February, 2016, DATE OF PUBLICATION: 22 February, 2016

If not delivered please return to:-

विपश्यन विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422 403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (02553) 244076, 244086, 243712,
243238. **फैक्स :** (02553) 244176
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org